



Santal Shiksha. Sanskriti, bhasa aur milpi

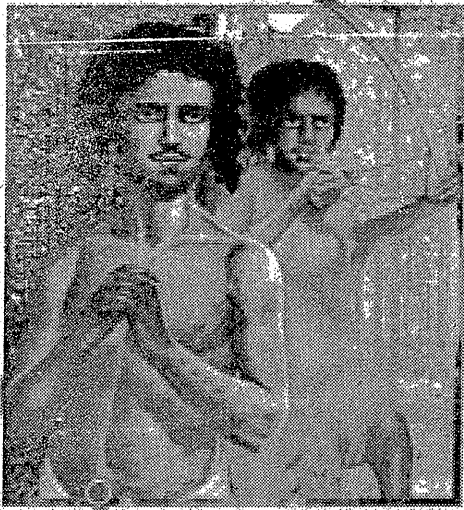
Andersen, Peter Birkelund

Published in:
Probhat Khabar. Akhbar Nahi Andoln,

Publication date:
2005

Document version
Også kaldet Forlagets PDF

Citation for published version (APA):
Andersen, P. B. (2005). Santal Shiksha. Sanskriti, bhasa aur milpi. *Probhat Khabar. Akhbar Nahi Andoln*, 6-6.



150 वर्ष

संताली हूब



प्रो पीटर एंडरसन

तुलना के लिए यह गौर किया जा सकता है कि वर्ष 1991 में पश्चिम बंगाल की अनुसूचित जनजातियों में साक्षरता दर 34.3 फीसदी थी, जबकि संतालों में साक्षरता दर 6.7 फीसदी थी। सामान्य विकास का दूसरा संकेतक पुरुषों-स्त्रियों की तुलनात्मक साक्षरता दर है। गैर अजा/अजजा आबादी में दोनों के बीच का फासला कम होता जा रहा है। (वर्ष 1981 में पुरुष साक्षरता दर 50.67 और स्त्री साक्षरता दर 30.25 थी.) ठीक

टेबल 1 साक्षरता

राज्य	साक्षरता दर	पुरुष	महिला
1991			
बिहार	20.8	32.4	8.9
पश्चिम बंगाल	27.6	40.8	14.0
ओड़िसा	24.5	37.6	10.8
त्रिपुरा	24.3	35.0	11.3

यही स्थिति अनुसूचित जनजाति (1981: पुरुष-21.16, स्त्री-5.01) और संतालों की नहीं थी।

करेगा, यदि आमजन के बीच निर्देश का माध्यम संताली भाषा में शुरू किया जाए, यह नहीं भूलना चाहिए कि ड्रॉपआउट के लिए अन्य सामाजिक-सांस्कृतिक कारण भी जराबदेह हैं। भूमिहीन मजदूरों के लिए अपने बच्चों को स्कूल भेजना बहुत ही मुश्किल है। और, पलायित मजदूरों की स्थिति और भी दयनीय है। सांस्कृतिक समूहों के बीच विशिष्ट प्रतियोगिता मौजूद है और उच्चवर्गीय छात्रों द्वारा भाति-भाति प्रकार की धमकाने-पेशान करने की स्थितियां भी पायी जाती हैं।

निर्देश-माध्यम के रूप में संताली भाषा को रखने की कानूनी पृष्ठभूमि स्पष्ट है, भारतीय संविधान का अनुच्छेद 350 अ कहता है कि, "राज्य के अंतर्गत भाषायी अल्पसंख्यक समूह के बच्चों को प्राथमिक शिक्षा मातृभाषा में उपलब्ध कराने के लिए प्रत्येक स्थानीय प्रशासन और प्रत्येक राज्य को पर्याप्त कोशिश करनी होगी।" संविधान (92वां संशोधन) अधिनियम 2003 (7 जनवरी, 2004) द्वारा संविधान

इंस्ट्रक्शन इन बंगाल की रिपोर्ट शुरू से ही जोर देती है कि यह गलत रणनीति थी और निर्देशों को उनकी मातृभाषा के माध्यम से दिया जाना था। इस समस्या पर सिलसिलेवार रूप से सबसे पहले मिशनरियों ने हल्ला बोला। वर्ष 1884 के बाद से सरकारी स्कूलों में ऐसी विशेष व्यवस्था की गयी कि स्कूली शिक्षा के प्रारंभिक वर्षों में संताली छात्रों को संताली शिक्षक ही संताली भाषा में पढ़ाएं। सभी समकालीन रिपोर्ट इस व्यवस्था को सफल दर्शाते हैं। आजादी के बाद बिहार (अब बिहार और झारखंड सरकार), ओड़िसा और पश्चिम बंगाल ने इस व्यवस्था को छोड़ दिया। इस कदम के चाहे जो भी वजह रहे हों, वर्ष 1956-57 में पश्चिम बंगाल सरकार के अंतर्गत जनजातीय भाषा कमिटी निर्मित हुई, जिसने कई जनजातीय भाषाओं के लिए उनकी मातृभाषा में ही निर्देश देने की अनुशंसा की। संताली के लिए यह निर्दिष्ट किया गया कि स्कूल में पहले दो वर्षों के दौरान एक निश्चित संख्या में संताली छात्रों के लिए निर्देश माध्यम के रूप में संताली को शुरू किया जा सकता है। उन्हें उनकी मातृभाषा में पढ़ाया जा सकता है। इसके बाद ही उनके लिए निर्देश का माध्यम बंगला हो सकती है। इस रिपोर्ट ने बंगला लिपि में संताली मुद्रण के लिए एक संभाव्य रास्ता

पड़ता है। मैंने एक गैरसरकारी प्राथमिक विद्यालय का दौरा भी किया, जिसे सिर्फ इन्हीं रास्तों पर चलने से संताली विद्यार्थियों को शिक्षण व्यवस्था से जोड़ने में भारी सफलता मिली थी। इस फैसले की एक समस्या अभी भी ऐसी ही है, यानी यह कि संताली भाषा के लिए किस लिपि का उपयोग किया जाए। वर्तमान स्थिति में संताली अपनी भाषा क्रम से क्रम पांच लिपियों- बंगला, नागरी, ओड़िया, रोमन और ओलचिकी- में पढ़ते और लिखते हैं। वर्ष 1924-25 के दौरान दिवंगत गुरु रघुनाथ मुर्मू ने ओलचिकी लिपि विकसित की थी। इनमें से कोई भी या सभी लिपियां स्कूल में निर्देश के माध्यम के रूप में चलायी जा सकती हैं। आगे के अध्ययन-कार्य में इन निर्देशों को छात्रों को और अधिक गति पहुंचानी चाहिए। यह विचार करना ज्यादा महत्वपूर्ण है कि किस हद तक यह सफल हो सकता है। इसलिए मैं यह विचार करूंगा कि उन लिपियों में से किसी ने उन संतालों के बीच, जो पढ़ते-लिखते हैं, व्यापक स्तर पर किसी तरह की पाठकीयता पैदा की है।

छपे हुए साहित्य की प्रसार संख्या

आज संताली साहित्य की अच्छी हुई है। कविता, उपन्यास से लेकर पत्रकारिता और कृषि निर्देशों तक के प्रकाशन संताली भाषा में सामने आ रहे हैं। 1992 में एक इंटरव्यू में मुझे बताया गया कि ऑल इंडिया संताली ओथर्स यूनियन में लगभग 400 सदस्य हैं। इसके अतिरिक्त संताली बुद्धिजीवियों और लेखकों की कई अन्य संगठन भी हैं, जैसे क्रोलकाता की संताली अकादमी

संताली शिक्षा संस्कृति, भाषा और लिपि

(भारतीय जनगणना 1991 के अनुसार संताली आबादी में संताली साक्षरता दर)

संतालों के पिछड़ेपन के पीछे कई कारण हैं, प्रमुख कारण शुरुआत से ही प्राथमिक विद्यालयों में स्कूल छोड़ने वाले बच्चों की संख्या (स्कूल ड्रॉपआउट) में इजाफा होते जाना है और शिक्षा व्यवस्था में गिरावट है। और यद्यपि मैं इस परिपत्र में तर्क रखूंगा कि यह संताली छात्रों के प्रदर्शन में काफी सुधार

की आठवीं अनुसूची में संताली भाषा को शामिल किया जाना भी इसमें शामिल है। हालांकि मौजूदा तर्क की शुरुआत 19वीं सदी में होती है।

स्कूल छोड़ने के भाषामूलक कारण संताली शिक्षा के प्रारंभिक दौर में निर्देश का माध्यम उनकी अपनी भाषा नहीं थी, बल्कि बहुसंख्यकों की अन्य भाषाओं में से एक थी, अमूमन हिंदी या बंगला, पब्लिक

बनाया। यद्यपि यह रिपोर्ट लगभग आधी सदी पहले लिखी गयी थी, आज के संतालों को दो भाषाओं की अच्छी जानकारी है। अनुशंसाएं आज भी तर्कसंगत हैं। 1980 के दशक से आज तक शोध के लिए पश्चिम बंगाल भ्रमण के दौरान मैं लगातार उन शिक्षकों और मानवविज्ञानियों से मिला, जिन्होंने कहा था कि संतालियों को स्कूल में भाषामूलक समस्याओं का सामना करना

ऐ

सा प्रतीत होता है कि वर्ष 1852 में संतालों के बीच पहला स्कूल ईसाई मिशनरियों द्वारा शुरू किया गया था, परंतु 1855 के हूल दमन के तुरंत बाद सरकार और कई ईसाई मिशनरी संस्थाओं ने स्कूल खोलने के लिए स्थायी प्रयासों की शुरुआत हुई। इन प्रयासों के बावजूद यह तथ्य है कि अन्य आदिवासियों की भांति संताल सामान्य शिक्षा के मामले में अनुसूचित जाति के लोगों से भी पीछे हैं, जिस तरह सामान्य जाति के लोगों की तुलना में अनुसूचित जाति के सदस्यों की है।



प्रकाश खबर

शुक्रवार नहीं श्रांदोलन

एक मानवविज्ञानी नजरिए से सिर्फ यही दिलचस्प नहीं है कि इस भाषा में छपे हुए साहित्य है, बल्कि यह अपने हर पाठक तक पहुंचते भी हैं. 1986 के पतझड़ में मैं पश्चिम बंगाल के एक गांव में कुछ महीने ठहरा था.

पश्चिम बंगाल के उन इलाकों में, जहां के निजी अनुभव मेरे पास हैं, ऐसा प्रतीत होता है कि जितने संताली साहित्य प्रकाशित हुए हैं, उनकी लिपि बंगला है. ये वो संताली साहित्य हैं, जो एसइसीए के संग्रह में नहीं हैं. जो संताल एक दूसरे को चिट्ठियां लिख रहे हैं, वे बंगला लिपि का उपयोग कर रहे हैं. वह लिपि उनके लिए पूरी तरह से कारगर है.

जब मैंने 1950 के दशक में प्रकाशित कुछ पुस्तकों की तलाश की तो उनमें से कई किताबें कई घरों में मिलीं. हालांकि नये संस्करण में वह पुस्तक खरीदी जानी थी, जिसे एक बड़े मेले में कलकत्ता स्थित कल्चरल एंड लिटरी सोसाइटी ने एक स्टैंड में लगाया था. हाल में ही मैंने अनुभव किया कि गांव में एक-दो पत्रिकाओं के ग्राहक हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि किशोर-वय के बच्चे भी इन्हें रुचि लेकर पढ़ते हैं. यद्यपि रिमिल जैसी पत्रिकाओं के कुछ विषय ज्यादा बड़े बच्चों के लिए उपयुक्त लगती हैं.

जहां तक लिपियों के विवाद की बात है, इसमें महत्वपूर्ण यह है कि क्या कोई लिपि तमाम पाठकों को समझ में आती है, और यही संतालों में भारी मतभेद है. 1986 में मैं झारखंड के दुमका जिले में घूमा था और तभी मुझे लगा कि इसाइयों में रोमन लिपि ज्यादा लोकप्रिय है. पश्चिम बंगाल के उत्तरी हिस्से

में रह रहे संतालों ने भी मुझे बताया कि वे अपनी भाषा उनकी लिपि में भी पढ़ लेते हैं.

1967 से आदिवासी सोशियो-एजुकेशनल एंड कल्चरल एसोसिएशन (एसइसीए) ओलचिकी लिपि का प्रचार-प्रसार करते रहे हैं. ओलचिकी लिपि के प्रचार-प्रसार के लिए एसइसीए द्वारा किए गये महत्वपूर्ण काम करने के बावजूद पिछले 15 वर्षों से पश्चिम बंगाल में ओलचिकी लिपि जानने वाले शिक्षकों का अभाव था. झारखंड और ओडिसा के संक्षिप्त दौरे से जितना मैं जान सका, वह यह कि इस लिपि में यहां व्यापक स्तर पर पाठक नहीं बनाये हैं. इससे यह पता चलता है कि ओलचिकी लिपि में व्यापक स्तर पर लोगों को साक्षर नहीं किया गया है. इसकी जांच के लिए आपको, संताल किस तरह पढ़ते-लिखते हैं, यह पता करना होगा.

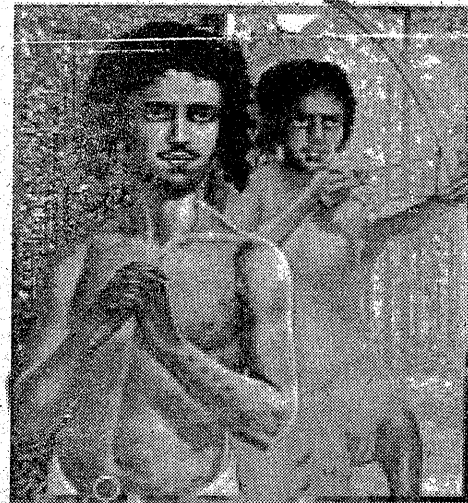
पश्चिम बंगाल के उन इलाकों में, जहां के निजी अनुभव मेरे पास हैं, ऐसा प्रतीत होता है कि जितने संताली साहित्य प्रकाशित हुए हैं, उनकी लिपि बंगला है. ये वो संताली साहित्य हैं, जो एसइसीए के संग्रह में नहीं हैं. जो संताल एक दूसरे को चिट्ठियां लिख रहे हैं, वे बंगला लिपि का उपयोग कर रहे हैं. यह लिपि उनके लिए पूरी तरह से कारगर है. मुझे उन लोगों की पहचान करने में बड़ी मुश्किल हुई, जो इसे पढ़ते हैं. गांव के वयस्क, जो बंगला लिपि से वाकिफ हैं, उन्होंने अपनी सांस्कृतिक अस्मिता के लिए ओलचिकी लिपि सीखने में कोई रुचि नहीं दिखाई. मेरी जानकारी में संताली भाषा में जितना काम बंगला लिपि में हुआ है, उतना ओलचिकी लिपि में नहीं हुआ. यही बात झारखंड और उड़ीसा के देवनागरी और ओडिया पर भी लागू होती है. जब स्कूली शिक्षा की बात आती है, तो संतालों को उन्हीं समस्याओं का सामना करना पड़ता है, जो किसी भी पहली पीढ़ी के उन सीखनेवाले को होता है, जिन्हें घर से होमवर्क के रूप में मदद नहीं मिलती है. निर्देश के माध्यम के रूप में बंगला लिपि होने की वजह से जो डॉपआउट की समस्या पैदा हुई है, उसकी भ्रपायी ओलचिकी

करेगी. लेकिन कुछ समस्याओं का समाधान व्यापक सामाजिक जनाधार वाली किसी लिपि में लिखे गये संताली माध्यम में निर्देशों को अमल में ला कर किया जा सकता है. बंगाल के दक्षिणी और पश्चिमी हिस्सों में बंगला लिपि का जनाधार है, अन्य लिपियों वाले राज्यों में भी.

उपसंहार और अनुशंसाएं

यह यकीन करने के लिए काफी है कि संताल विद्यार्थियों के स्कूल छोड़ने की एक प्रमुख वजह यह है कि पश्चिम बंगाल में निर्देश माध्यम का बंगला होना. जनजातीय भाषा कमिटी की अनुशंसाओं के कार्यान्वयन के जरिए यह स्थिति बदली जा सकती है, जहां संताली आबादी ज्यादा है, उस इलाके के स्कूलों में पहले दो वर्षों तक निर्देशों का माध्यम मातृभाषा हो. बाद में धीरे-धीरे, तीसरी कक्षा से बंगला भाषा में निर्देश दिए जा सकते हैं. इस तर्ज पर बिहार, झारखंड और ओडिसा के लिए शिक्षा की रणनीति बनायी गयी है. जहां तक लिपि का मामला है, वही लिपि बतायी जानी चाहिए जो उसके घर में अमल में है. यदि इन्हें दूसरी लिपि बतायी जाती है तो यह साक्षर परिवारों के बच्चे को भी पहली पीढ़ी के सीखने वालों जैसा बना देगा. मेरी राय में बंगला ही एकमात्र लिपि है जो पश्चिम बंगाल के वयस्क संतालों के बीच व्यापक स्तर पर उपयोग में है. पश्चिम बंगाल के उत्तरी और पश्चिमी हिस्से के मेरे जमीनी अनुभव इसे ही पुष्ट करते हैं. हालांकि मैंने यह भी सुना है कि पश्चिम बंगाल के अन्य हिस्सों में संतालों के बीच रोमन लिपि भी उसी तरह लोकप्रिय है, मगर उन इलाकों का मुझे अनुभव नहीं है, इसलिए मेरा सुझाव यह है कि जो लिपि वयस्क संतालों के बीच ज्यादा प्रचलित हो, उसी की अनुशंसा की जाए. फिलहाल ओलचिकी को स्कूली शिक्षा के माध्यम के लिए अनुशंसित न किया जाए क्योंकि किसी भी राज्य की बहुसंख्यक संताल आबादी के बीच ओलचिकी में व्यापक स्तर पर वयस्कों को शिक्षित नहीं किया गया है.

(लेखक यूनिवर्सिटी ऑफ कोपेनहेगन, डेनमार्क में प्रोफेसर हैं.)



150 वर्ष

संताल हूल

ए

सा प्रतीत होता है कि वर्ष 1852 में संतालों के बीच पहला स्कूल ईसाई मिशनरियों द्वारा शुरू किया गया था, परंतु 1855 के हूल दमन के तुरंत बाद सरकार और कई ईसाई मिशनरी संस्थाओं ने स्कूल खोलने के लिए स्थायी प्रयासों की शुरुआत हुई। इन प्रयासों के बावजूद यह तथ्य है कि अन्य आदिवासियों की भांति संताल सामान्य शिक्षा के मामले में अनुसूचित जाति के लोगों से भी पीछे हैं, जिस तरह सामान्य जाति के लोगों की तुलना में अनुसूचित जाति के सदस्यों की है।



प्रो पीटर एंडरसन

प्रभात खबर
शुक्रवार नहीं आंदोलन

तुलना के लिए यह गौर किया जा सकता है कि वर्ष 1991 में पश्चिम बंगाल की अनुसूचित जनजातियों में साक्षरता दर 34.3 फीसदी थी, जबकि संतालों में साक्षरता दर 6.7 फीसदी थी। सामान्य विकास का दूसरा संकेतक पुरुषों-स्त्रियों की तुलनात्मक साक्षरता दर है। गैर अजा/अजजा आबादी में दोनों के बीच का फासला कम होता जा रहा है। (वर्ष 1981 में पुरुष साक्षरता दर 50.67 और स्त्री साक्षरता दर 30.25 थी) ठीक

राज्य	साक्षरता दर	पुरुष	महिला
1991			
बिहार	20.8	32.4	8.9
पश्चिम बंगाल	27.6	40.8	14.0
ओडिसा	24.5	37.6	10.8
त्रिपुरा	24.3	35.0	11.3

यही स्थिति अनुसूचित जनजाति (1981: पुरुष-21.16, स्त्री-5.01) और संतालों की नहीं थी।

करेगा, यदि आमजन के बीच निर्देश का माध्यम संताली भाषा में शुरू किया जाए, यह नहीं भूलना चाहिए कि डॉपआउट के लिए अन्य सामाजिक-सांस्कृतिक कारण भी जराबदेह हैं। भूमिहीन मजदूरों के लिए अपने बच्चों को स्कूल भेजना बहुत ही मुश्किल है। और, पलायित मजदूरों की स्थिति और भी दयनीय है। सांस्कृतिक समूहों के बीच विशिष्ट प्रतियोगिता मौजूद है और उच्चवर्गीय छात्रों द्वारा भाति-भांति प्रकार की धमकाने-परेषान करने की स्थितियां भी पायी जाती हैं।

निर्देश-माध्यम के रूप में संताली भाषा को रखने की कानूनी पृष्ठभूमि स्पष्ट है, भारतीय संविधान का अनुच्छेद 350 अ कहता है कि, "राज्य के अंतर्गत भाषायी अल्पसंख्यक समूह के बच्चों को प्राथमिक शिक्षा मातृभाषा में उपलब्ध कराने के लिए प्रत्येक स्थानीय प्रशासन और प्रत्येक राज्य को पर्याप्त कोशिश करनी होगी।" संविधान (92वां संशोधन) अधिनियम 2003 (7 जनवरी, 2004) द्वारा संविधान

इंस्ट्रक्शन इन बंगाल की रिपोर्ट शुरू से ही जोर देती है कि यह गलत रणनीति थी और निर्देशों को उनकी मातृभाषा के माध्यम से दिया जाना था। इस समस्या पर सिलसिलेवार रूप से सबसे पहले मिशनरियों ने हल्ला बोला। वर्ष 1884 के बाद से सरकारी स्कूलों में ऐसी विशेष व्यवस्था की गयी कि स्कूली शिक्षा के प्रारंभिक वर्षों में संताली छात्रों को संताली शिक्षक ही संताली भाषा में पढ़ाएं। सभी समकालीन रिपोर्ट इस व्यवस्था को सफल दर्शाते हैं। आजादी के बाद बिहार (अब बिहार और झारखंड सरकार), ओडिसा और पश्चिम बंगाल ने इस व्यवस्था को छोड़ दिया। इस कदम के चाहे जो भी वजह रहे हों, वर्ष 1956-57 में पश्चिम बंगाल सरकार के अंतर्गत जनजातीय भाषा कमिटी निर्मित हुई, जिसने कई जनजातीय भाषाओं के लिए उनकी मातृभाषा में ही निर्देश देने की अनुशंसा की। संताली के लिए यह निर्दिष्ट किया गया कि स्कूल में पहले दो वर्षों के दौरान एक निश्चित संख्या में संताल छात्रों के लिए निर्देश माध्यम के रूप में संताली को शुरू किया जा सकता है। उन्हें उनकी मातृभाषा में पढ़ाया जा सकता है। इसके बाद ही उनके लिए निर्देश का माध्यम बंगला हो सकती है। इस रिपोर्ट ने बंगला लिपि में संताली मुद्रण के लिए एक संभाव्य रास्ता

पड़ता है। मैंने एक गैरसरकारी प्राथमिक विद्यालय का दौरा भी किया, जिसे सिर्फ इन्हीं रास्तों पर चलने से संताल विद्यार्थियों को शिक्षण व्यवस्था से जोड़ने में भारी सफलता मिली थी। इस फैसले की एक समस्या अभी भी ऐसी ही है, यानी यह कि संताली भाषा के लिए किस लिपि का उपयोग किया जाए। वर्तमान स्थिति में संताली अपनी भाषा कम से कम पांच लिपियों- बंगला, नागरी, ओडिया, रोमन और ओलचिकी- में पढ़ते और लिखते हैं। वर्ष 1924-25 के दौरान दिवंगत गुरु रघुनाथ मुर्मू ने ओलचिकी लिपि विकसित की थी। इनमें से कोई भी या सभी लिपियां स्कूल में निर्देश के माध्यम के रूप में चलायी जा सकती हैं। आगे के अध्ययन-कार्य में इन निर्देशों को छात्रों को और अधिक गति पहुंचानी चाहिए। यह विचार करना ज्यादा महत्वपूर्ण है कि किस हद तक यह सफल हो सकता है। इसलिए मैं यह विचार करूंगा कि उन लिपियों में से किसी ने उन संतालों के बीच, जो पढ़ते-लिखते हैं, व्यापक स्तर पर किसी तरह की पाठकीयता पैदा की है।

छपे हुए साहित्य की प्रसार संख्या

आज संताली साहित्य की अच्छी हुई है। कविता, उपन्यास से लेकर पत्रकारिता और कृषि निर्देशों तक के प्रकाशन संताली भाषा में सामने आ रहे हैं। 1992 में एक इंटरव्यू में मुझे बताया गया कि ऑल इंडिया संताल ऑर्थर्स यूनियन में लगभग 400 सदस्य हैं। इसके अतिरिक्त संताल बुद्धिजीवियों और लेखकों की कई अन्य संगठन भी हैं, जैसे कोलकाता की संताल अकादमी।

एक मानवविज्ञानी नजरिए से सिर्फ यही दिलचस्प नहीं है कि इस भाषा में छपे हुए साहित्य है, बल्कि यह अपने हर पाठक तक पहुंचते भी हैं। 1986 के पतझड़ में मैं पश्चिम बंगाल के एक गांव में कुछ महीने ठहरा था।

पश्चिम बंगाल के उन इलाकों में, जहां के निजी अनुभव मेरे पास हैं, ऐसा प्रतीत होता है कि जितने संताली साहित्य प्रकाशित हुए हैं, उनकी लिपि बंगला है। वे वो संताली साहित्य हैं, जो एसएससीए के संग्रह में नहीं हैं। जो संताल एक दूसरे को चिट्ठियां लिख रहे हैं, वे बंगला लिपि का उपयोग कर रहे हैं। यह लिपि उनके लिए पूरी तरह से कारगर है।

जब मैंने 1950 के दशक में प्रकाशित कुछ पुस्तकों की तलाश की तो उनमें से कई किताबें कई घरों में मिलीं। हालांकि नये संस्करण में वह पुस्तकें खरीदी जानी थी, जिसे एक बड़े मेले में कलकत्ता स्थित कल्चरल एंड लिटररी सोसाइटी ने एक स्टैंड में लगाया था। हाल में ही मैंने अनुभव किया कि गांव में एक-दो पत्रिकाओं के ग्राहक हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि किशोर-वय के बच्चे भी इन्हें रुचि लेकर पढ़ते हैं। यद्यपि रिमिल जैसी पत्रिकाओं के कुछ विषय ज्यादा बड़े बच्चों के लिए उपयुक्त लगती हैं।

जहां तक लिपियों के विवाद की बात है, इसमें महत्वपूर्ण यह है कि क्या कोई लिपि तमाम पाठकों को समझ में आती है, और यही संतालों में भारी मतभेद है। 1986 में मैं झारखंड के दुमका जिले में घूमा था और तभी मुझे लगा कि ईसाइयों में रोमन लिपि ज्यादा लोकप्रिय है। पश्चिम बंगाल के उत्तरी हिस्से

में रह रहे संतालों ने भी मुझे बताया कि वे अपनी भाषा उनकी लिपि में भी पढ़ लेते हैं। 1967 से आदिवासी सोशियो-एजुकेशनल एंड कल्चरल एसोसियेशन (एसएससीए) ओलचिकी लिपि का प्रचार-प्रसार करते रहे हैं। ओलचिकी लिपि के प्रचार-प्रसार के लिए एसएससीए द्वारा किए गये महत्वपूर्ण काम करने के बावजूद पिछले 15 वर्षों से पश्चिम बंगाल में ओलचिकी लिपि जानने वाले शिक्षकों का अभाव था। झारखंड और ओडिसा के संक्षिप्त दौरे से जितना मैं जान सका, वह यह कि इस लिपि ने यहां व्यापक स्तर पर पाठक नहीं बनाये हैं। इससे यह पता चलता है कि ओलचिकी लिपि में व्यापक स्तर पर लोगों को साक्षर नहीं किया गया है। इसकी जांच के लिए आपको, संताल किस तरह पढ़ते-लिखते हैं, यह पता करना होगा।

पश्चिम बंगाल के उन इलाकों में, जहां के निजी अनुभव मेरे पास हैं, ऐसा प्रतीत होता है कि जितने संताली साहित्य प्रकाशित हुए हैं, उनकी लिपि बंगला है। वे वो संताली साहित्य हैं, जो एसएससीए के संग्रह में नहीं हैं। जो संताल एक दूसरे को चिट्ठियां लिख रहे हैं, वे बंगला लिपि का उपयोग कर रहे हैं। यह लिपि उनके लिए पूरी तरह से कारगर है। मुझे उन लोगों की पहचान करने में बड़ी मुश्किल हुई, जो इसे पढ़ते हैं। गांव के वयस्क, जो बंगला लिपि से वाकिफ हैं, उन्होंने अपनी सांस्कृतिक अस्मिता के लिए ओलचिकी लिपि सीखने में कोई रुचि नहीं दिखाई। मेरी जानकारी में संताली भाषा में जितना काम बंगला लिपि में हुआ है, उतना ओलचिकी लिपि में नहीं हुआ। यही बात झारखंड और उड़ीसा के देवनागरी और ओडिया पर भी लागू होती है। जब स्कूली शिक्षा की बात आती है, तो संतालों को उन्हीं समस्याओं का सामना करना पड़ता है, जो किसी भी पहली पीढ़ी के उन सीखनेवाले को होता है, जिन्हें घर से होमवर्क के रूप में मदद नहीं मिलती है। निर्देश के माध्यम के रूप में बंगला लिपि होने की वजह से जो डॉपआउट की समस्या पैदा हुई है, उसकी भरपायी ओलचिकी

करेगी। लेकिन कुछ समस्याओं का समाधान व्यापक सामाजिक जनाधार वाली किसी लिपि में लिखे गये संताली माध्यम में निर्देशों को अमल में ला कर किया जा सकता है। बंगाल के दक्षिणी और पश्चिमी हिस्सों में बंगला लिपि का जनाधार है, अन्य लिपियों वाले राज्यों में भी।

उपसंहार और अनुशंसाएं

यह यकीन करने के लिए काफी है कि संताल विद्यार्थियों के स्कूल छोड़ने की एक प्रमुख वजह यह है कि पश्चिम बंगाल में निर्देश माध्यम का बंगला होना। जनजातीय भाषा कमिटी की अनुशंसाओं के कार्यान्वयन के जरिए यह स्थिति बदली जा सकती है, जहां संताली आबादी ज्यादा है, उस इलाके के स्कूलों में पहले दो वर्षों तक निर्देशों का माध्यम मातृभाषा हो। बाद में धीरे-धीरे, तीसरी कक्षा से बंगला भाषा में निर्देश दिए जा सकते हैं। इस तर्ज पर बिहार, झारखंड और ओडिसा के लिए शिक्षा की रणनीति बनायी गयी है। जहां तक लिपि का मामला है, वही लिपि बतायी जानी चाहिए जो उसके घर में अमल में है। यदि इन्हें दूसरी लिपि बतायी जाती है तो यह साक्षर परिवारों के बच्चे को भी पहली पीढ़ी के सीखने वालों जैसा बना देगा। मेरी राय में बंगला ही एकमात्र लिपि है जो पश्चिम बंगाल के वयस्क संतालों के बीच व्यापक स्तर पर उपयोग में है। पश्चिम बंगाल के उत्तरी और पश्चिमी हिस्से के मेरे जमीनी अनुभव इसे ही पुष्ट करते हैं। हालांकि मैंने यह भी सुना है कि पश्चिम बंगाल के अन्य हिस्सों में संतालों के बीच रोमन लिपि भी उसी तरह लोकप्रिय है, मगर उन इलाकों का मुझे अनुभव नहीं है, इसलिए मेरा सुझाव यह है कि जो लिपि वयस्क संतालों के बच ज्यादा प्रचलित हो, उसी की अनुशंसा की जाए। फिलहाल ओलचिकी को स्कूली शिक्षा के माध्यम के लिए अनुशंसित न किया जाए क्योंकि किसी भी राज्य की बहुसंख्यक संताल आबादी के बीच ओलचिकी में व्यापक स्तर पर वयस्कों को शिक्षित नहीं किया गया है।

(लेखक यूनिवर्सिटी ऑफ कोपेनहेगन, डेनमार्क में प्रोफेसर हैं।)

संताल शिक्षा संस्कृति, भाषा और लिपि

(भारतीय जनगणना 1991 के अनुसार संताल आबादी में संताल साक्षरता दर) संतालों के पिछड़ेपन के पीछे कई कारण हैं, प्रमुख कारण शुरुआत से ही प्राथमिक विद्यालयों में स्कूल छोड़ने वाले बच्चों की संख्या (स्कूल डॉपआउट) में इजाफा होते जाना है और शिक्षा व्यवस्था में गिरावट है। और यद्यपि मैं इस परिपत्र में तर्क रखूंगा कि यह संताल छात्रों के प्रदर्शन में काफी सुधार

की आठवीं अनुसूची में संताली भाषा को शामिल किया जाना भी इसमें शामिल है। हालांकि मौजूदा तर्क की शुरुआत 19वीं सदी में होती है।

स्कूल छोड़ने के भाषामूलक कारण संताल शिक्षा के प्रारंभिक दौर में निर्देश का माध्यम उनकी अपनी भाषा नहीं थी, बल्कि बहुसंख्यकों की अन्य भाषाओं में से एक थी, अमूमन हिंदी या बंगला। पब्लिक

बनाया। यद्यपि यह रिपोर्ट लगभग आधी सदी पहले लिखी गयी थी। आज के संतालों को दो भाषाओं की अच्छी जानकारी है। अनुशंसाएं आज भी तर्कसंगत हैं। 1980 के दशक से आज तक शोध के लिए पश्चिम बंगाल भ्रमण के दौरान मैं लगातार उन शिक्षकों और मानवविज्ञानियों से मिला, जिन्होंने कहा था कि संतालों को स्कूल में भाषामूलक समस्याओं का सामना करना